ResearchPro International Multidisciplinary Journal

Vol- 2, Issue- 2, April-June 2026 ISSN (O)- 3107-9679

Email id: editor@researchprojournal.com Website- www.researchprojournal.com

बैगा जनजातियों का हितरक्षक अर्थात् वन अधिकार अधिनियम 2006: एक अध्ययन

सचिन कुमार पाण्डेय

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान एवं मानवाधिकार विभाग, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक, मध्य प्रदेश

गोपाल सिंह

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान एवं मानवाधिकार विभाग, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक, मध्य प्रदेश

Article Info: *(Recieved- 05/01/2026, Accept- 02/02/2026, Published- 03/04/2026)*

DOI- 10.70650/rpimj.2026v2i200005

सारांश

वन आश्रित जनजातियों के लिए जंगल सदियों से आजीविका और भरण–पोषण का संधारणीय स्रोत रहा है। वन संसाधनों पर निर्भर भूमिहीन जनजाति समुदाय एवं बैगा समुदाय इस परिसंस्था के सदियों से मूल निवासी तथा अभिरक्षक रहे है। जिनके परंपरागत गतिविधियों को वन विभाग द्वारा कई दशकों से क्रूरता व बलपूर्वक प्रतिबंधित और विनियमित किया गया है। किन्तु वन अधिकार अधिनियम 2006, के अधिनियमित हो जाने के बाद वनवासियों के साथ अब तक किए गये ऐतिहासिक अन्याय से उनके मुक्ति का मार्ग प्रशस्त हुआ है। इस क्रांतिकारी अधिनियम के द्वारा व्यक्तिगत एवं सामुदायिक अधिकारों की आजीविका को सुरक्षित एवं सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है। एफ.आर.ए. के तहत वनों और प्राकृतिक संसाधनों के संधारणीय उपयोग के लिये स्थानीय स्वशासन को सशक्त करने का प्रावधान करता है। बैगा जनजातीय मध्य पूर्व में विशेष स्थान रखता है। इस जनजाति के विकास के स्तर को देखते हुए भारत सरकार ने विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूहों में रखा है। यह जनजातीय मध्य प्रदेश के पूर्वी क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। बैगा समुदाय मध्य प्रदेश की सबसे विशेष पिछड़ी आदिवासी समुदाय है, जो मैकाल पर्वतों में निवास करता है। जहाँ के पारंपरिक चरागाह अभयारण्य एवं अचानक मार्ग राष्ट्रीय उद्यानों के अंतर्गत आते हैं। यह आदिवासी पशुओं को चराने व आजीविका के लिये अपने नज़दीकी वनों से ओतप्रोत है। वन अधिकार अधिनियम के तहत, बैगा जनजातियों को अधिकार है कि वन क्षेत्र, संरक्षित क्षेत्र में अपने पशुओं को चरा सकेंगे और आजीविका के संसाधन संग्रहीत कर पाएंगे। उपरोक्त कानून में यह स्पष्ट किया गया है कि उन समुदायों को जो पारंपरिक तौर पर नज़दीकी चरवाही करते रहे हैं, उन्हें चरवाही के मौसम में यह अधिकार मिलता रहेगा। लेकिन वास्तविकता यह है कि इन्हें इसकी अनुमति उन्हें नहीं दी जाती है। इस पृष्ठभूमि में प्रस्तुत लेख में वन अधिकार अधिनियम 2006, के प्रावधानों के दायरे में वन बैगा समुदाय की वर्तमान दिशा और दशा के कुछ पहलुओं का वृत्त का एक अध्ययन (केस स्टडी) के रूप में एक समीक्षात्मक अध्ययन है।

मूल शब्दः बैगा समुदाय, वन अधिकार अधिनियम, आजीविका

प्रस्तावना–

भारत में लाभग 10 करोड़ से अधिक वन आश्रितों के लिए जंगल आजीविका और भरण–पोषण का एक मुख्य स्रोत है। इनमें से 6 करोड़ से अधिक लोग आदिवासी हैं और देश के 60 वन 187 आदिवासी जिलों में हैं (दोंदे,

35, 2022)। उनमें से एक वन आश्रित है– बैगा समुदाय है,जो मैकाल क्षेत्रों में निवासरत हैं। यह देश की सबसे विशेष रूप से कमज़ोर वनवासी समुदाय है, जो मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड और उत्तरप्रदेश जैसे वन्य राज्यों की घने जंगलों में निवास करते हैं। आजादी के पहले भारतीय जंगलों पर उत्तर उपनिवेशवादियों का शासन था, किंतु आजादी के बाद भी, वही राज विद्यमान है सिर्फ उपनिवेशवादियों की त्वचा का रंग ही बदल गया है यह अवलोकन भारत में वानिकी शासन के लंबे इतिहास को अच्छी तरह से सारांशित करता है जहां ब्रिटिश राज और उत्तर औपनिवेशिक भारतीय राज्य दोनों ने वनों पर निर्भर लाखों पारंपरिक वन आश्रित आदिवासी और दलित समुदायों की कीमत पर जंगलों को नियंत्रित किया है। भारत वन अधिनियम 1927 का उपयोग करके अंग्रेजों द्वारा सीमांकन के माध्यम से वनों का वाणिज्यिक शोषण और स्वतंत्रता के बाद के भारत के वन संरक्षण कानूनों में एक बात समान थी बैगा आदिवासी जैसे वन आश्रित समुदायों का अन्यसंक्रामण दोनों में एक समान था। औपनिवेशिक मानसिकता ने इस विचार को जन्म दिया कि वनों का वैज्ञानिक प्रबंधन निष्कर्षण की प्रक्रिया में सहायता करेगा, जो विकास के लिए अपरिहार्य था। वन विभाग को देश का सबसे बड़ा भूमि मालिक बनाकर (कुल भौगोलिक क्षेत्र 23 प्रतिशत) वनों पर पहले राज्य का नियंत्रण निर्धारित हुआ और फिर वनों को उन लोगों से बचाने के लिए वन विभाग को जिम्मेदार बनाया जो लोग इस परिसंस्था के सदियों से मूल निवासी तथा अभिरक्षक थे (दोंदे, 35, 2022)।

इन शीर्ष पाद और बहिष्कृत वन और संरक्षण नीतियों के तहत, बैगा समुदाय और अन्य चरवाहे, जिनके पास परंपरागत रूप से जमीन नहीं थी, लेकिन वे वन संसाधनों पर निर्भर थे, वन अधिकार अधिनियम (थ्ट।), 2006 के लागू होने से पहले, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ के जंगलों में रहने वाले बैगा समुदाय की पारंपरिक 'बेवर' (झूम या स्थानांतरित) खेती को औपनिवेशिक और बाद में वन नीतियों द्वारा अतिक्रमण माना जाता था। इस कृषि पद्धति को वनों के विनाश का कारण बताकर उन्हें अपनी ही ज़मीन पर अवैध अतिक्रमणकारी कहा जाता था। इस दृष्टिकोण के कारण, पारंपरिक झूम खेती पर प्रतिबंध लगा दिए गए और बैगा आदिवासियों को स्थायी खेती करने के लिए मजबूर किया गया। बैगाओं को उनकी ही पारंपरिक जमीन पर खेती करने की अनुमति देने के बदले भारी लगान और कर (टैक्स) वसूला जाता था। कई क्षेत्रों में उन्हें अनिवार्य रूप से वन विभाग के लिए मुफ्त या कम मजदूरी पर काम भी करना पड़ता था, जो एक तरह से बंधुआ मजदूरी के समान था। उनकी उपस्थिति को वन भूमि पर अनुमत रियायत के रूप में देखा जाने लगा न कि उनके पारंपरिक आजीविका का अधिकार और फिर कभी अधिकृत शुल्क या कभी अनाधिकृत रिश्वत की अदायगी के माध्यम से उनके गतिविधियों को विनियमित किया गया। बैगाओं द्वारा बेवर पर प्रतिबंध का भारी विरोध करने पर, अंग्रेजों ने 1890 के आसपास मंडला और डिंडोरी क्षेत्र में एक विशेष आरक्षित क्षेत्र बनाया, जिसे बैगा चक कहा गया। यहाँ कुछ शर्तों के साथ उन्हें बेवर खेती करने की विशेष अनुमति दी गई थी, लेकिन अन्य क्षेत्रों में उन्हें बाहर कर दिया गया या बंधुआ मजदूर बना दिया गया (https://www-downtoearth-org-in) अचानकमार टाइगर रिज़र्व (छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश) में निवास करने वाली बैगा जनजाति एक विशेष रूप से कमजोर आदिवासी समूह (च्टज्ळ) है। वे पीढ़ियों से अपने पारंपरिक ज्ञान और ग्राम सभाओं के माध्यम से जल, जंगल और जमीन का संरक्षण व प्रबंधन करते आ रहे हैं। वन अधिकार अधिनियम (FRA) 2006, विशेष रूप से पर्यावास अधिकार के माध्यम से इस विशेष संरक्षित जनजाति (PVTG) को उनकी पारंपरिक भूमि और आजीविका का कानूनी संरक्षण प्रदान करने का प्रयास कर रहा हैं।

बैगाओं का अर्थ ही वैद्य या पारंपरिक चिकित्सक माना जाता है। उन्हें जंगल में उपलब्ध सैकड़ों प्रकार के औषधीय पौधों, जड़ी–बूटियों, और फलों की गहरी समझ होती है, जिसका उपयोग वे प्राकृतिक तरीके से बीमारियों का उपचार करने में करते हैं। सदियों से बैगा समुदाय अपनी आजीविका, भोजन (जैसे कंद–मूल,शहद, महुआ), और दैनिक जरूरतों के लिए पूरी तरह से जंगल पर निर्भर रहा है, लेकिन वे कभी भी प्रकृति का दोहन नहीं करते। उनकी संस्कृति में पेड़ों, जानवरों और जलस्रोतों को पूजनीय माना जाता है। बैगा जनजाति जितनी प्राचीन जनजाति है उतनी ही प्राचीन संस्कृति भी है, जो अपनी संस्कृति को सँजोये हुए है। इनका रहन–सहन, खानपान अत्यंत सादा होता है और यह जनजाति विशेष मान्यता रखने वाले पेड़ों की पूजा भी करते है (कुमार एवं अग्रवाल, 2018)। 2008 में वन अधिकार अधिनियम की संवैधानिक वैधता को चुनौती देने वाली वन्यजीव ट्रस्ट और अन्य बनाम भारत संघ नाम से दर्ज एक याचिका इसी शहरी सोच का प्रमाण है। राइट्स एंड रिसोर्स इंस्टीट्यूट की एक रिपोर्ट के मुताबिक विश्वभर में 13.6 करोड़ लोगों का विस्थापन प्राकृतिक संरक्षण की वजह से हुआ है। रिपोर्ट के मुताबिक जैव–विविधता बचाने के नाम पर विस्थापन, मानव अधिकारों का हनन और सशस्त्र हिंसा की जा रही है ((दोंदे, 36, 2022)। अचानकमार्ग में बाघ संरक्षण और अभ्यारण्य के विस्तार के कारण बैगाओं के सामने अपने पारंपरिक क्षेत्रों से विस्थापन का खतरा मंडरा रहा है। विस्थापन से अपनी आजीविका

खत्म हो जाने के डर के कारण वे अक्सर इसका विरोध भी करते हैं और पारंपरिक व्यवस्थाओं को बचाने के लिए संघर्षरत हैं।

परिकल्पना–

वन संपदा का संधारणीय प्रबंधन तथा बैगा समुदाय सहित तमाम देशज, जनजातीय और वन आश्रितों समुदायों के व्यक्तिगत एवं सामुदायिक हित बिरादरी वानिकी को प्रोन्नत करने वाले वनाधिकार अधिनियम 2006, के सफल क्रियान्वयन में निहित है। इसलिए इसे शक्तिहीन व निर्बल बनाने की हर एक कोशिश का डटकर सामना करना और हर हाल में इस क्रन्तिकारी अधिनियम का न्यायसंगत क्रियान्वयन इस वक्त की मांग है।

क्रियाविधि–

वन अधिकार अधिनियम 2006, के दायरे में बैगा समुदाय की वर्तमान दशा को वृत्त का एक अध्ययन (केस स्टडी) के रूप में प्रस्तुत यह अध्ययन, एक परिव्यापक, असंरचित और गैर संख्यात्मक डेटा पर निर्भर रहकर प्राथमिक और प्रकाशित साहित्य व डेटा का गुणात्मक तथा समीक्षात्मक विश्लेषण है।

विचार विमर्श –

बैगा एक अति संवेदनशील जनजाति (च्टज्ळ) है जिसका जीवन सदियों से जंगलों, प्राकृतिक संसाधनों और जड़ी–बूटियों पर ही आश्रित रहा है। मध्य प्रदेश (जैसे कान्हा और बांधवगढ़) और छत्तीसगढ़ के कई वन क्षेत्रों को जब राष्ट्रीय उद्यानों या टाइगर रिज़र्व में परिवर्तित किया गया, तो बैगाओं को विस्थापन का दर्द झेलना पड़ा। वन क्षेत्रों को राष्ट्रीय उद्यानों में बदलने से उनके पारंपरिक आवास समाप्त गए हैं, लेकिन पीढ़ियों से जंगलों में रहने के कारण उनकी आजीविका और संस्कृति का आधार आज भी वन ही हैं। हालाँकि, अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006 या वन अधिकार अधिनियम (एफआरए) के आगमन ने चीजों को बदल दिया है। इस कानून के तहत सरकार ने बैगा समुदाय को उनके अधिकारों के प्रति सशक्त किया है।

सामुदायिक वानिकी के सिद्धांत पर आधारित वन अधिकार अधिनियम–

2006 का वैचारिक ढांचा प्राकृतिक संसाधनों के राज्य नियंत्रित केंद्रीकृत प्रबंधन से प्रमुख प्रतिमान स्थानांतरण है। दुनिया भर में स्वीकृत प्राकृतिक संसाधनो के विकेन्द्रीकृत प्रबंधन का दृश्य परिणाम है। इस अधिनियम ने यह सुनिश्चित किया है कि चरागाहों के पास भी सामुदायिक वन संसाधन के बदले चरागाहों तक पहुँचने का अधिकार है जिसके वे पात्र हैं। धारा 2 (ए) एक गांव की पारंपरिक या प्रथागत सीमाओं के भीतर प्रथागत आम वन भूमि पर चारागाही समुदायों के अधिकारों के लिए निर्धारित करती है। यह चारागाही समुदायों के मामले में एक भू–दृश्य के समयानुकूल उपयोग को भी निर्धारित करता है, जिसमें अवर्गीकृत वन, आरक्षित वन, गैर–सीमांकित वन, मानित वन, संरक्षित वन, अभ्यारण्य और राष्ट्रीय उद्यान शामिल हैं। दुर्भाग्य से, कानून के बारे में जागरूक होने के बावजूद, उनके वैध भूमि दावों को दृढ़ता से कहने में असमर्थता के साथ–साथ वन विभाग द्वारा कानून की अवहेलना के परिणामस्वरूप इन वनवासियों के अधिकारों की अपर्याप्त मान्यता हुई है। पिछले दशक के दौरान, वन विभाग द्वारा बैगा समुदायों के लिए उनके चरागाहों को संरक्षित क्षेत्र घोषित करने या अतिक्रमण के आधार पर प्रवेश प्रतिबंधित करने के लिए कई प्रयास किए गए हैं। एफआरए का प्रभावी क्रियान्वयन इस क्षेत्र में बैगा समुदायों की सामुदायिक पहुंच और कार्यकाल को मान्यता देने की एकमात्र उम्मीद है। हालाँकि, इन अधिकारों का स्वतंत्र रूप से प्रयोग करने के लिए समुदाय को न्यायिक सहायता पर निर्भर होने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। चराई वाले चरागाहों तक पहुंच को एक अधिकार के रूप में महसूस किया जाना चाहिए। प्रोटोकॉल का हवाला देते हुए नौकरशाही की बाधाएं नहीं खड़ी की जानी चाहिए। बल्कि, एक उपनिवेश से मुक्त दृष्टिकोण समय की मांग है। एफआरए में कई मोर्चों पर आदिवासी और अन्य वनवासी लोगों को सशक्त बनाने में एक जबरदस्त, हालांकि अक्सर अप्रयुक्त क्षमता है। सबसे पहले, यह व्यक्तिगत भूमि अधिकारों को मान्यता देकर और वन कॉमन्स पर सामुदायिक अधिकार प्रदान करके वन निवासी समुदायों को वित्तीय रूप से सशक्त बनाता है। लघु वनोपज द्वारा उत्पन्न विशाल राजस्व के प्रबंधन का यह पुनर्गठन पहले राज्य वन विभागों के दायरे में था किन्तु अब इन संसाधनों के सामुदायिक स्वामित्व के साथ–साथ आय उत्पन्न करने में मदद मिली है और वनों के न्यायसंगत निवासियों को अतिक्रमण के लिए जुर्माना लगाने से रोका गया है। दूसरा, ग्राम सभाओं की सहमति की आवश्यकता पर एफआरए का जोर परिषद जिसमें समुदाय के सभी वयस्क सदस्य शामिल है। संयुक्त वन प्रबंधन (जेएफएम) कार्यक्रमों से एक महत्वपूर्ण प्रस्थान रहा है। 1990 के दशक के जेएफएम कार्यक्रमों का पुनः आविष्कार केंद्रीय पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा वन विभाग द्वारा नियुक्त ग्राम वन समितियों के रूप में किया गया था, जहाँ सहमति के बजाय परामर्श पर जोर दिया जाता है। भारत में भूमि स्वामित्व के अन्य

पितृवंशीय नियमों के विपरीत, एफआरए महिलाओं को उनके पुरुष समकक्षों के रूप में वनभूमि और सामुदायिक वन संसाधनों के समान अधिकार के रूप में मान्यता देने में विलक्षण है। इसने विवाहित महिलाओं के साथ–साथ विधवाओं, एकल महिलाओं और बहुपत्नी प्रथा के परिणामस्वरूप आर्थिक सुरक्षा से वंचित महिलाओं को काफी सशक्त बनाया है। अंत में, प्राकृतिक संरक्षण प्रयासों में स्वदेशी समुदायों के महत्व को स्पष्ट रूप से स्वीकार करने में एफआरए की पारिस्थितिक दूरदर्शिता को याद रखना महत्वपूर्ण है, जिसे 2018 में जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र अंतर–सरकारी पैनल द्वारा भी मान्यता दी गई थी। प्रकृतिक संरक्षण समूहों और सेवानिवृत्त वन नौकरशाहों के एक कुलीन वर्ग द्वारा 2008 में एफआरए की संवैधानिक वैधता को चुनौती देते हुए वन्यजीव ट्रस्ट और अन्य बनाम भारत संघ नाम से एक याचिका दर्ज की गयी थी। एफआरए के खिलाफ इस याचिका में 2008 से कई उलटफेर किए गए हैं। शुरू में एफआरए की संवैधानिक वैधता को चुनौती देने के बाद, याचिका कर्ता उन लोगों को बेदखल करने की मांग करते हैं, जिनके व्यक्तिगत और सामुदायिक वन अधिकारों के दावों को एफआरए के तहत अस्वीकार कर दिया गया है। याचिका का मूल दावा आदिवासियों और अन्य वनवासी समुदायों को पर्यावरण के लिए हानिकारक के रूप में प्रस्तुत करना प्राकृतिक संरक्षणवादियों के रूप में उनकी सफलता के बढ़ते सबूतों के सामने पूरी तरह से भ्रामक या संदेह पैदा करने वाला है। इसके अलावा, यदि सफल होता है, तो एफआरए को भंग करना, और समुदाय सहमति आधारित लोकतांत्रिक वन शासन का मॉडल निगमों द्वारा वनों को हरियाली हथियाने का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। हाल ही में, यह क्षतिपूरक वनीकरण कोष (सीएएफ) अधिनियम (2016) द्वारा किया जा रहा है, जो खनन और निर्माण जैसे गैर–वानिकी उद्देश्यों के लिए वन भूमि के विषथन की अनुमति देता है, जब तक कि परियोजना को पूरा करने वाले प्रतिपूरक वनरोपण की लागत वहन करते हैं। यह सक्रिय रूप से एफआरए को कमजोर करता है क्योंकि क्षतिपूरक वनीकरण के लिए घन वन नौकरशाही के हाथों में है, न कि ग्राम सभाओं के हाथों में। इसके अलावा, एफआरए के विपरीत, सीएएफ अधिनियम केवल व्यक्तिगत भूमि कार्यों को मान्यता देता है, इस प्रकार कमजोर स्वदेशी समुदायों के सामुदायिक वनभूमि में प्रतिपूरक वनीकरण गतिविधियों की अनुमति देता है। सीएएफ अधिनियम न केवल एफआरए द्वारा सुनिश्चित किए गए सामुदायिक वन अधिकारों को स्वीकार करने से इनकार करता है और ग्राम सभाओं के लिए सहमति की आवश्यकता को कम करता है, यह एकल कृषि या मोनोकल्बरल वृक्षारोपण को वनों के रूप में गिने जाने की अनुमति देकर एक विकृत पारिस्थितिक दृष्टिकोण को अपनाता है। 2018 की राष्ट्रीय वन नीति के मसौदे में भी श्वन उत्पादकता बढ़ाने के नाम पर वन प्रबंधन के एक सार्वजनिक–निजी मॉडल की अनुमति देकर, वनों के वित्तीयकरण की ओर समान झुकाव प्रदर्शित किया गया था, जो इसके सही मालिकों स्थानिक और पारंपरिक आदिवासियों एवं जनजातियों की भूमिका की अवहेलना करता है। केंद्रीय पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने भारतीय वन अधिनियम (1927) में खतरनाक संशोधनों का प्रस्ताव करते हुए एक मसौदा भेजा। ये राज्य के वन विभागों को कई तरह से अदम्य शक्ति प्रदान करेंगे। स्थानिक आदिवासियों एवं जनजातियों के अधिकार छीने जा सकते हैं यदि विभाग उन्हें अपने संरक्षण के उद्देश्यों का उल्लंघन करता हुआ पाता है। संशोधन वन अधिकारियों को प्रतिरक्षा की भी अनुमति देता है यदि वे अतिक्रमण या उल्लंघन करने वालों के खिलाफ हथियारों का उपयोग करते हैं। वनों के वित्तीयकरण के अपने उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए, संशोधन वाणिज्यिक वनों की एक नई कानूनी श्रेणी स्थापित करने और निजी फर्मों की भागीदारी के माध्यम से उत्पादन वनों को बढ़ावा देने का भी प्रयास करता है। ये सभी पारिस्थितिक और सुधारात्मक न्याय के उल्लंघन में हैं जिसकी गारंटी एफआरए ने मांगी है। हालांकि, एफआरए, जो एक अधिक्रमण अधिनियम है इसे अन्य कानूनों द्वारा रौंदा नहीं जा सकता है ऐसे कमजोर विरोधी कानूनों के कार्यान्वयन में यह एक महत्वपूर्ण कांटा रहा है। एफआरए को कमजोर करने वाली ग्यारह साल पुरानी याचिका, जिसकी कानूनी वैधता अत्यंत विवादास्पद है, इस याचिका के पक्ष में बेदखली या निष्कासन का आदेश यह बता रहा है कि एफआरए परोपकारी एवं आदिवासी और स्थानिक जनजाति हितैषी एक सशक्त अधिनियम है। भारत में पहले से ही बहुत सारे राज्य सरकारों ने यह स्वीकार करते हुए हलफनामा प्रस्तुत किया है कि एफआरए के तहत किए गए दावों की अस्वीकृति त्रुटिपूर्ण और गलत है। भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा देश के कुछ सबसे अनिश्चित लोगों को उनके पैतृक घरों से बेदखल करने की जल्दबाजी, बिना किसी उचित प्रक्रिया की परवाह किए, भारत और वैश्विक स्तर पर मानवाधिकारों और पर्यावरण रक्षकों की संघटन और एकजुटता का आव्हान करती है। भारत के कई विश्वविद्यालयों और सामाजिक संस्थानों के शोध अध्ययनों से यह प्रमाणित हुआ है कि मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ और झारखंड के वनों में निवास करने वाली बैगा जनजाति का जीवन, संस्कृति और आजीविका पूरी तरह से वनों पर ही आधारित है। जंगल उनके लिए केवल एक आवास नहीं, बल्कि उनके अस्तित्व और संस्कृति का मुख्य आधार हैं। वनाधिकार कानून के धारा (4) के अनुसार किसी स्थान को वन्यजीवों के संरक्षण स्थल की घोषणा करने में स्थानीय समुदाय की सहमति जरूरी

है। इसके अलावा वैज्ञानिक तौर पर यह साबित करना होगा कि उस स्थान पर इंसान और वन्यजीव एकसाथ नहीं रह सकते और वन पर अधिकार दिया गया तो वन्यजीवों का अस्तित्व संकट में आ जाएगा। वनाधिकार कानून यह नहीं कहता कि आदिवासियों का विस्थापन नहीं हो सकता। इसका मकसद कानूनी तौर पर वन्यजीव और इंसानों के साथ रहने और जंगल के संरक्षण की संभावनाओं को तलाशना है। जब कोई और उपाय न बचे तब विस्थापन सबकी सहमति से किया जाए। यहाँ तक कि वनों को एकदम प्राचीन अवस्था में बनाये रखने का आग्रह अवैज्ञानिक है; जो मानव–वन्यजीव सह–अस्तित्व की संभावना को समाप्त करता है। भूमि के कानूनी अधिकारों के बावजूद उत्पीड़न एक कड़वा सत्य है। वन अधिकार अधिनियम के तहत, बैगा समुदाय को अधिकार है कि वन क्षेत्र, संरक्षित क्षेत्र में अपने मवेशियों को चरा सकें। उपरोक्त कानून में यह स्पष्ट किया गया है कि उन समुदायों को जो पारंपरिक तौर तरीके होते है कि जंगल बैगाओं के लिए जीवन का अभिन्न अंग हैं। बैगा जनजाति को मध्य प्रदेश के डिंडोरी (बैगाचक क्षेत्र) सहित कई हिस्सों में पर्यावास अधिकार प्रदान किए गए है। यह अधिकार एक विशिष्ट क्षेत्र और परिदृश्य को मान्यता देते हैं, न कि केवल व्यक्तिगत भूमि के टुकड़ों को हालाँकि, इन अधिकारों की स्पष्ट दिशानिर्देशों के अभाव में, स्थानीय स्तर पर वन विभाग और आदिवासियों के बीच क्षेत्राधिकार और प्रबंधन को लेकर भ्रम और विवाद होता है। बैगा जैसी विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूहों (PVTG) के वनों को राष्ट्रीय उद्यानों और बाघ अभ्यारण्यों में बदलने से उनका अपने ही प्राकृतिक आवास और आजीविका के स्रोतों से निरंतर विस्थापन हो रहा है। वन्यजीव संरक्षण (मुख्य रूप से बाघ संरक्षण) के नाम पर कान्हा और अचानक मार्ग जैसे टाइगर रिजर्व से बैगा परिवारों को उनके मूल क्षेत्रों से बाहर विस्थापित किया गया है।

उपसंहार

विकास और पर्यावरण के बीच का यह टकराव एक बेहद गंभीर और संवेदनशील मुद्दा है। विकास परियोजनाओं के नाम पर प्रकृति का विनाश और आदिवासी समुदायों का विस्थापन न केवल उनके अधिकारों का हनन है, बल्कि यह पारिस्थितिक संतुलन को भी असंतुलित करता है, किन्तु ऐसी परियोजनाओं में बाधा बनने वाले दुर्बल वन आश्रितों को विस्थापित किया जाता है। तब यह सवाल उठता है कि क्या विकास परियोजनाओं की कीमत सिर्फ अधिकारहीन आदिवासियों को ही चुकानी पड़ेगी ? बैगा समुदायों के जंगल पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करने वाले और उनके खिलाफ आवाज उठाने वाले शहरी पर्यावरणविद और संरक्षण जीवविज्ञानी जब कभी जंगलों में सड़क, पुल, नहर, खदाने बनाये जाते हैं और बड़े पैमाने पर भूमि अधिग्रहण होती है, तब सब के सब इसके खिलाफ में आवाज नहीं उठाते। सवाल खड़ा होता है कि यह पर्यावरण संरक्षण किसके लिए किया जा रहा है? क्या उन पर्यटकों के लिए है. जो इन सड़कों और कारखानों का इस्तेमाल करते हुए इन वनों में घूमने आते हैं? ऐसी सड़कें और बड़े बड़े कारखाने जो वनों को तहस–नहस करके बनाये जा रहे हैं। क्या प्रकृति केवल एक देखने और तारीफ करने की चीज है? क्या बैगा या संरक्षित क्षेत्रों के पास के खेती–किसानी करने वाले समुदायों को मुख्य धारा में समाहित कर आगे बढ़ने का हमारा उत्तरदायित्व नहीं है? ये वो लोग हैं जिन्होंने इन वनों को सदियों से संरक्षित कर रखा है। इसलिए विकास परियोजनाओं के नाम पर होने वाले प्राकृतिक विनाश और वनों की कटाई एक गंभीर चिंता का विषय है। विकेंद्रीकृत शासन व्यवस्था में वन अधिकार अधिनियम, 2006 आदिवासियों और वनवासियों के अधिकारों की रक्षा करने और उन्हें उनके प्राकृतिक आवासों से विस्थापित होने से बचाने के लिए एक अत्यंत महत्वपूर्ण कानूनी हथियार है। विकेंद्रीकरण का सबसे बड़ा उदाहरण इस कानून में ग्राम सभा को दी गई शक्तियां हैं। वनों के प्रबंधन और किसी भी विकास परियोजना के लिए भूमि के उपयोग की अनुमति ग्राम सभा की सहमति के बिना नहीं दी जा सकती। अब समय आ गया है कि सभी हितधारक विकास और पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन बनाते हुए, वन अधिकार अधिनियम की मूल भावनाकृजिसमें ग्राम सभा को विकेंद्रीकृत अधिकार जो प्राप्त हैं का पूरी तरह से पालन किया जाना चाहिए और सरकार के द्वारा बैगाओं को वनों से बेदखल करने के बजाय, उन्हें वन प्रबंधन और संरक्षण का मुख्य भागीदार बनाया जाना चाहिए। बैगा जनजाति के आवास और भौगोलिक क्षेत्र (जिन्हें पर्यावास माना जाता है) को कानूनी मान्यता दी जानी चाहिए। यह अधिकार उनके सांस्कृतिक स्थलों, पारंपरिक कृषि पद्धतियों (जैसे बेवार खेती) और वन संसाधनों पर सामूहिक नियंत्रण को सुनिश्चित करता है। वनाधिकार अधिनियम के प्रावधानों के तहत एक स्थायी समाधान निकाले क्योंकि यह समुदाय निश्चित रूप से व्यवहार, जीवन शैली और सांस्कृतिक परिवर्तनों से गुजर रहा है, जिसकी वजह से उनके अस्तित्व को ही खतरा पैदा हुआ है। उनकी पारंपरिक जीवनशैली तथा प्रथाओं को सकारात्मक भावना से संरक्षित किया जाना चाहिए क्योंकि वे इस पारिस्थितिकी के मुलनिवासी एवं अभिरक्षक है।

Author's Declaration:

I/We, the author(s)/co-author(s), declare that the entire content, views, analysis, and conclusions of this article are solely my/our own. I/We take full responsibility, individually and collectively, for any errors, omissions, ethical misconduct, copyright violations, plagiarism, defamation, misrepresentation, or any legal consequences arising now or in the future. The publisher, editors, and reviewers shall not be held responsible or liable in any way for any legal, ethical, financial, or reputational claims related to this article. All responsibility rests solely with the author(s)/co-author(s), jointly and severally. I/We further affirm that there is no conflict of interest financial, personal, academic, or professional regarding the subject, findings, or publication of this article.

सन्दर्भ –

1. दोंदे, सुभाष भीमराव (2022), वन गुर्जरो का हितरक्षक अर्थात् वनाधिकार अधिनियम दृ 2006 रू वृत का अध्ययन, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ हिंदी रिसर्च, वॉल्यूम 8, इशू 3, पृ.सं. 35
2. वही, पृ.सं. 35
3. कुमार, गजेन्द्र एवं अग्रवाल, किशोर कुमार (2018), बैगा जनजाति के उत्पत्ति की अवधारणा का ऐतिहासिक विश्लेषण, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ एडवांस इन सोशल साइंस, वॉल्यूम 6, अंक–1
4. https://www.downtoearth.org.in/governance/indigenous-people-in-india-and-the-web-of-indifference-5523.

Cite this Article

' सचिन कुमार पाण्डेय; गोपाल सिंह ', "बैगा जनजातियों का हितरक्षक अर्थात् वन अधिकार अधिनियम 2006: एक अध्ययन", ResearchPro International Multidisciplinary Journal (RPIMJ), ISSN: 3107-9679 (Online), Volume:2, Issue:2, April-June 2026.

"Copyright © 2026 The Author(s). This work is licensed under Creative Commons Attribution 4.0 (CC-BY), allowing others to use, share, modify, and distribute it with proper credit to the author."